जीवन विद्या राष्ट्रीय सम्मेलन 2010 - बड़ोखर खुर्द, बांदा, उत्तर प्रदेश के अवसर पर एक प्रस्ताव

-रणसिंह आर्य

श्रद्धेय पूज्य बाबा जी, मार्गदर्शक, अभिभावक, सम्माननीय बुजुर्ग, माताएँ, समस्त अतिथिगण, बहनों-भाइयों, मित्रों एवं प्यारे बालकों सभी को यथा योग्य सादर अभिवादन।

अपनी तृप्ति की तलाश में कई ज्ञान धाराओं, साधना पद्धतियों, ग्राम विकास, जन आंदोलन एवं स्वराज्य की प्रकिया से गुजरना हुआ। दुनियादारी की दृष्टि से बड़ी-बड़ी सफलताएं तो मिली, लेकिन तृप्ति नहीं मिली। जो पहचान बनी, वह खुद को ही स्वीकार नहीं थी। पू० बाबा जी से मिलन के दौरान (1988) में काफी उलझा हुआ था। इसके बावजूद भी ज्ञान (शाश्वत सत्य, ईश्वर ज्ञान) तथा स्वराज्य को समझना मेरी जिज्ञासा थी। मेरी समझने की प्रकिया धीमी, जटिल एवं पीड़ादायक रही। सत्य को समझने के लिए जिस तरह की आश्वस्ति चाहिए थी, उसकी कमी थी। समझने की प्रकिया जैसे जैसे आगे बढ़ी तो आश्वस्ति भी बढ़ती गई। बाबा जी के सान्निध्य में जीवन को मक़सद और दिशा दोनों मिली।

बड़ोखर खुर्द का ये 15वां मिलन उत्सव पूर्वक सार्थक हो ऐसी मेरी कामना एवं प्रयास है। रिश्तों में ताजगी और कहां क्या-क्या हो रहा है, उसकी जानकारी लेने में सम्मेलनों की बड़ी भूमिका रही है। सम्मेलनों में सामूहिक चिंतन के आधार पर आगे की दिशा में मदद का काम अभी नहीं हो पाया है। बड़ोखर खुर्द में इस आयाम पर भी काम हो और हमारी मैत्री प्रमाणिकता की तरफ बढ़ सके तो उपकार होगा। पिछले दो तीन वर्षो में ऐसा वातावरण बना है कि आज हमारे सामने सार्थक करने के लिए अवसर ही अवसर है। अब ऐसा लग रहा है, अवसरों के मुकाबले हम लोग कम (संख्या में) पड़ने लगे हैं। लगातार बहुत सी ऐसी घटनाऐं घट रही है जो काफी आश्वस्त करती हैं। अब अभियान में प्रचलित तंत्र की बड़ी-बड़ी बाधाएं स्वतः ही दूर हो रही है और नये नये अवसर बन रहे हैं। हमारी योग्यता से अधिक परिणाम मिल रहे हैं। इस प्रक्रिया में जो-जो मित्र लगे है उन सबके प्रति गौरव का अनुभव हो रहा है।

१. मध्यस्थ दर्शन (सहअस्तित्ववाद) - जीवन विद्या का कार्यक्रम एवं असर

जीवन विद्या शिविरों में हर जाति, वर्ग, धर्म एवं संप्रदाय के बहुत लोग आश्वस्त हो रहे हैं। इस कारण अपने सबंधियों को भी शिविर में ला रहे है। कई लोग तो पूरे परिवार के साथ शिविर कर रहे हैं। शिविरों का हर व्यक्ति पर कुछ न कुछ सार्थक प्रभाव पड़ रहा है। एक आश्चर्यजनक घटना देखने को मिल रही है कि जिस किसी ने इन बातों को एक बार थोड़ा ठीक से सुन लिया उसकी गहरी स्वीकृति बन रही है। सुख से सुविधा नहीं मिलती इस बात को तो लोग आसानी से स्वीकार कर रहे हैं। लेकिन सुविधा में सुख नहीं ये बात अभी मान्यता के स्तर पर भी कम ही लोगों को स्वीकार हो रही है, यह महत्वपूर्ण मुद्दा है, जिस पर ठीक से ध्यान जाना आवश्यक है। शिविरों का एक बड़ा असर साफ तौर पर दिख रहा है कि बहुत लोगों को यह महसूस होने लगता है कि घर में पर्याप्त साधन-सुविधा है और समृद्धि का भास-आभास होने लगता है। बहुत सारी फालतू की खरीद्दारी कम हो रही है। कुछ लोगों में धन-दौलत की संग्रह की प्रवृत्ति में भी कमी दिखाई दे रही है। लेकिन घर में जो साधन-सुविधा है, उसका क्या सदुपयोग किया जाये, यह अभी अधिकांश लोगों को स्पष्ट नहीं हो रहा है, इसपर ध्यान जाना आवश्यक लगता है। कुछ लोगों को शिविर के तुरन्त बाद तो कुछ लोगों को दो चार साल बाद ऐसा भी लगता है कि इन बातों के आधार पर जीना कठिन है। भले ही पूरी तरह जीने में ना आ पाये पर कहीं से कोई विरोध भी नहीं आया।

हमारे जितने भी अभी केन्द्र हैं, जहां कुछ लोग रहकर जीवन विद्या को समझ सकते हैं। वहां का वातावरण लंबे समय तक प्रेरक नहीं हो पाता है। कई लोग हमारे जीने के धरातल को देखकर, कुछ न कुछ नकारात्मक निष्कर्ष निकाल लेते हैं। इसमें कुछ तो उस व्यक्ति के नजरियें में भी कमी है, जिससे कुछ ज्यादा अपेक्षा बन जाती है। वास्तव में जीना (आचरण) तो समझ से ही संचालित है। कुछ रूढ़ीगत संस्कारों का भी उसमें असर आ जाता है। जीने के हर आयाम में सफलता तो मानवीय व्यवस्था में ही हो पायेगी। आचरण के मुद्दे पर सफलता के लिए ऐसा माहौल(वातावरण) बनाने की आवश्यकता है, जिसमें सार्थकता की प्रेरणा ज्यादा हो तथा फालतू की बातों पर ध्यान कम से कम जाये। आचरण में पूरा पड़ने के लिये स्वयं पर ध्यान अधिकांश समय बना रहे, ऐसा प्रयास किया जाये। अपने आचरण से मैं, स्वयं कितना तृप्त हूं, मेरे साथ जीने वाले कितने तृप्त हैं, मनुष्येत्तर प्रकृति के साथ मेरी कितनी भागीदारी सदुपयोग, संरक्षण-संवर्धन वाली है, इन सब पर स्वयं का ध्यान बना रहना

आवश्यक है। व्यवहार में हम सामने वाले व्यक्ति को जीवन रूप में समान स्वीकार कर पा रहे हैं या नहीं, अपने हर संबंधी को मैने अपना मूल्याकंन करने का अधिकार दिया है या नहीं, इसको स्वयं में जांचा जाये। साथ में रहते है तो अधिकार देने की जरूरत नहीं पड़ती क्योंकि अधिकार तो प्रकृति प्रदत्त है। यहां अधिकार का तात्पर्य है कि सामने वाले ने मेरे बारे में जो छवि बना रखी है, उसे वह निसंकोच मुझे बता सके, इतना संबंधी को अधिकार देने की जरूरत है। गलती ढूंढना मूल्याकंन नहीं है। सार्थकता को पहचानना मूल्याकंन है। कुल मिलाकर आज की परिस्थिति में आचरण वाले पक्ष पर ध्यान देने की प्राथमिकता हो। इसी बीच कुछ अच्छे साथी भी छूट रहे हैं या हमसे दूरी बना रहे है इसके कारणों को तुरंत पहचानने की जरूरत है।

अब **यदि बडे संदर्भों के स्तर पर देखे तो वहां अभी हमारी उपस्थिति नगण्य है।** एक उम्मीद जगाते प्रस्ताव के रूप में हमारी पहचान अभी एक सीमित दायरे में है। यदि थोड़ी सावधानियों का ध्यान रखकर चला जाये तो आने वाले 4-5 वर्षो में देश में उपस्थिति दर्ज हो सकती है। जब भी किसी विचार ने कुछ आशा जगाई तो लोग उसमें अर्पित हुए ही हैं।

२. आज की दशा एवं दिशा

आज की दशा एवं दिशा से सम्मेलन में उपस्थित अधिकांश लोग तो परिचित हैं ही। कुछ नये साथियों को ध्यान मे रखकर थोडी चर्चा की जरूरत है। विकास एवं अजीविका का जो रास्ता दुनिया ने चुना है उससे विनाश की कल्पना जन्म लेने लगी है। जानकार लोग डरे व सहमे हैं। धरती ही नष्ट हो सकती है, ऐसा बहुत लोग मानने लगे हैं। आदमी एवं आदमी के रिश्तों का झंझट तो आदिकाल से है, लेकिन आदमी और प्रकृति के बीच का इतना गहरा संकट ज्ञात इतिहास की पहली घटना है। आदमी ने भय दूर करने के जो उपाय किये, वह उससे सभी को लगातार डरा रहा है और स्वयं भी डरा हुआ है। जैविक, अणु-परमाणु बंमों का जखीरा धरती को लगभग 36 बार आग का गोला बना सकता है, ऐसा जानकार लोग बता रहे हैं। एक बार धरती के नष्ट होने के बाद 35 बार नष्ट होने का क्या अर्थ है? आदमी खुद में भी उलझ गया है आजकल सफल माने जाने वाले लोग भी मानसिक रूप में अभाव, भय, दबाव, तनाव, खालीपन एवं अकेलेपन का शिकार हो रहे हैं। परिवार में टूटन, शिकायत एवं समाज में अविश्वास (आतंकवाद-नक्सलवाद) बढ़ रहा है। वैचारिक चिन्तनशील एवं भावनाशील लोग कमजोर पड़ रहे हैं। शराफत, इन्सानियत, चरित्र खतरे में है। वैचारिक एवं भावनात्मक रूप से छोटी सोच वाले लोगों का शासन, नीतिगत निर्णयों, संसाधनो पर कब्जा हो चुका है। भारतीय परम्परा का आदर्श था प्रकृति व समाज से कम से कम लेकर ज्यादा से ज्यादा देना, यह धराशायी हो चुका है। आज का आदर्श प्रकृति व समाज से अधिक से अधिक लेकर कम से कम देना बन चुका है। आधुनिकता का यह आदर्श आज के संकट की जड़ है।

२.१ पूंजीवाद का प्रभाव

पिछले 200-250 सालों मे जो विचारधारा दुनिया पर हावी हुई है वह पश्चिमी आधुनिक सभ्यता से निकली है उसका नाम है पूंजीवाद। पूरी दुनिया में पूंजीवादी धारा का ही वर्चस्व है। जिसमें भविष्य के उन्नत समाज की जो कल्पना है उसमें गॉव एवं छोटे किसानों का कोई अस्तित्व नहीं है। खेती को पुरानी, पिछड़ी, दकियानूसी चीज़ मान लिया गया है। अमेरीका, कनाडा, पश्चिमी युरोप में राष्ट्रीय आय में खेती का हिस्सा 2-3 प्रतिशत से ज्यादा नहीं है। भारत के किसान अभी समाप्त इसलिए नहीं हुए हैं क्योंकि विकास गति तेज नहीं हो पायी है। विकास पूरा हो जाएगा तो गॉव की आबादी शहर में चली जाएगी। छोटे छोटे खेतों को विशालकाय फार्म खा जाएंगे।

२.२ युवा पीढ़ी में भटकाव

किशोर अवस्था से मानव जीवन में तेजी से परिवर्तन होने लगता है। अगले कुछ वर्षो में ही वह संसार के बारे में अपनी समझ बनाता है और खुद अपने जीवन की दिशा तय करने लगता है। इसी समय उसका चिंतन प्रखर और मौलिक होता है। इस समय वह जो लक्ष्य तय कर लेता है अक्सर उसी पर चलता है। मानव इतिहास में अधिकांश मौलिक चिंतन 24-32 वर्ष के युवाओं की मनीषा से ही निकला है। संसार के निर्माण में युवा शक्ति की निर्णायक भूमिका है। यह तभी संभव है जब उसकी उर्जा सही दिशा में लगे। आज युवा पीढ़ी जिस मानसिक पीड़ा व कुंठा से गुजर रही है लगता है, समाज उसकी स्थिति ठीक से नहीं पहचान पा रहा है। माता-पिता के सपनों के दबाव और शिक्षा में, कुछ सार्थकता नहीं मिलती। युवा पीढ़ी का एक वर्ग ऐसा तैयार हो रहा है जो न तो ठीक से पढ़ पा रहा है और न कोई अजीविका का अवसर मिल पा रहा है। ना कोई उनसे शादी

करने को तैयार है और न ये परिवार की सुनते हैं और ना ही इन्हें समाज की परवाह है। जिस आयु में सार्थक सपने जन्म लेते है, उस आयु में युवा पीढ़ी हताश और निराश है। जिसके कारण यह पीढ़ी नशा, मानसिक अवसाद और सैक्स की कुंठा में उलझ गई है।

२.३ मतवाद-संप्रदायवाद

मानव परम्परा में सदियों से लोगों ने समाज को सहज और जिदंगी को आसान बनाने के लिए बहुत सारे प्रयास किये हैं। कुछ सफलतायें भी मिली हैं। इन सब प्रयासों के पीछे कोई न कोई विचारधारा होती है। हर व्यक्ति का कोई न कोई मत (नजरिया) होता है। आपस के व्यवहार में भी हम अपने मत (नजरिया) को व्यक्त करते ही हैं। यह एक स्वभाविक क्रिया है। नजरियों का व्यक्ति पर प्रभाव पड़ता है। बड़े संदर्भो में ये मत (नजरिया) विचारधारा का रूप ग्रहण करते हैं। जब कोई मत या विचार मतवाद या संप्रदायवाद का रूप ग्रहण करता है तो थोड़े समय में ही वह प्रभावी भी हो जाता है। किसी व्यक्ति के नाम पर मतवाद या संप्रदाय बनने की प्रक्रिया घातक सिद्ध हुई है। उससे मूल व्यक्ति (गुरू) के विचारों में जो सार्थकता की संभावना थी वह खत्म हो जाती है, और समाज के टूटन का आधार बनती है। दुर्भाग्य से बहुत अच्छे-अच्छे विचार भी संप्रदायवाद का रूप ले चुके हैं।

२.४ कुछ और चिंताजनक बातें

- क्रांतिकारी परिवर्तनवादी, विकासवादी लोगों का जोश ठंडा पड गया है।
- राजनीति क्षेत्र में व्यवस्था परिवर्तन के नाम पर जो परिवर्तन हुए वे सत्ता परिवर्तन से आगे नहीं जा पाये, और अब ठहराव आ गया है।
- न्याय, सुरक्षा एवं समान अवसर देने के मुद्दे पर सरकारें बुरी तरह असफल हो चुकी हैं। किसी भी चुनाव में अच्छे व्यक्ति की आने की संभावना खत्म हो चुकी है, अपवाद की बात अलग है। आज के तमाम व्यवस्था के ढ़ांचे सड़-गल गये हैं। अधिकांश राजनीतिज्ञ, शासक-प्रशासक घोर भ्रष्टाचार में डूब चुके हैं।
- गांव की शिक्षित सफल युवापीढ़ी जाने अनजाने,गांव को उजाड़ने की भूमिका में आ चुकी है।

देश की बडी आबादी तो जीने के लिये ही जद्दो-जहद कर रही है। उसके लिए सुख की कल्पना ही कठिन है। असली समस्या तो यह है कि देश की शायद 99% से ज्यादा आबादी को आज के इस गहरे संकट का अहसास ही नहीं है। कुल मिलाकर लोग कष्ट में हैं अब ये स्वीकृति समाज में बढ़ रही है। इसके बावजूद पिछले 60-65 वर्षो में अनेक सरकारें बदली हैं, सलाहकार भी बदले हैं, लेकिन सलाह नहीं बदली है। इन सब कारणों को ठीक से पहचानने की जरूरत है।

मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद-जीवन विद्या के रूप में श्रद्धेय बाबा जी के माध्यम से सर्वशुभ का प्रस्ताव उपलब्ध हुआ है, इस विचार की पवित्रता कैसे बनी रहे और ये संप्रदाय न बने ये हम सब की सामूहिक जिम्मेदारी है इसके लिये उन कारणों को पहचानने की जरूरत है जिनके चलते संप्रदाय जन्म लेते हैं। उन कारणो को पहचानकर उनसे बचने के उपायों पर काम साथ-साथ करना चाहिए।

३. अगला कदम-मानवीय व्यवस्था हेतु प्रयास

हमारा सारा प्रयास मूलतः पारिवारिक एवं सामाजिक है। लेकिन अभी हमारे प्रयास की मुख्यधारा संस्थागत बन गई है। इससे काफी अनुकूलता भी बनी है। लेकिन यह बात ध्यान रखने की है कि सरकारी संस्थागत ढॉचे खोखले हो चुके हैं और सड़ चुके हैं। इनमें इतनी सामर्थ्य नहीं है, कि यह मानवीय परंपरा को खड़ा कर सके। इन संस्थागत प्रयासों में सुधार के साथ-साथ मानवीय व्यवस्था (स्वराज्य) को ध्यान में रखकर भी प्रयास शुरू होने चाहिए। यह प्रयास सामूहिक रूप में ही सफल हो सकेगा। अब समय आ गया है कि इस हेतु कोई एक या दो क्षेत्र पहचाने जाएं। चार-पॉच वर्ष तो उस क्षेत्र में व्यवस्थित प्रयास के लिए माहौल बनाने में ही लग जाएंगे। सबसे पहले समाज के विभिन्न धाराओं के बीच संवाद प्रकिया शुरू की जानी चाहीए। संवाद के लिए यात्राएं, छोटी-छोटी संगोष्ठियां, शिविरों का सिलसिला प्रारंभ हो। एक वर्ष शिविरों का दौर चलने के बाद

अध्ययन शिविरों की शुरूआत हो। जीने वाले आयामों में अनुकूलता, स्वास्थ्य, न्याय, जागृती, व्यवस्था आदि को ध्यान में रखकर, भोजन, वस्त्र, मकान, सफाई, औषधि, चिकित्सा, कृषि, स्थानीय कारीगरी, तकनीकी, शिक्षा आदि मुद्दों को भी अपनी मर्यादाओं को ध्यान में रखकर चलाना चाहिए।

४. अंतर्राष्ट्रीय स्तर के ज्ञान-केंद्र की आवश्यकता

ज्ञान का धारक-वाहक समाज है। परिवार ज्ञान का मूल स्त्रोत है। परिवार के सभी समझदार व्यक्ति शिक्षक की भूमिका में होते हैं। गुरू-आचार्य आदि सब परिवार-समाज के अंग रहे हैं। अपने देश में प्राचीन काल में ऋषि परंपरा ज्ञान-विज्ञान का केंद्र बनी, बाद में गुरूकुल परंपरा शुरू हुई। इसके बाद ब्राह्मण परंपरा एवं श्रवण परंपरा ज्ञान के केंद्र में रही। भगवान बुद्ध के बाद श्रवण परंपरा का बड़ा विस्तार हुआ। तीसरी-चौथी सदी से तेरहवीं सदी तक नालन्दा महाविहार (विश्वविद्यालय) बौद्ध परंपरा का शिक्षा व संस्कृति का केंद्र बना। उसी के कारण उस क्षेत्र का **बिहार** नाम पड़ा। उसी के साथ सनातन परंपरा के ज्ञान का केंद्र तक्षशिला विश्वविद्यालय (पाकिस्तान) बना इन दोनो धाराओं में कुछ विरोध भी रहा, बाद में तालमेल भी अच्छे रहे। पूरे एशिया से विद्वान एवं छात्र इन ज्ञान केंद्रो से जुड़े रहे। उसी दौर में मिश्र मे सारागोसा एवं सिकंदरिया ज्ञान के बड़े केंद्र बन रहे थे। यूनान में ज्ञान के केंद्रो को एकेडमी नाम दिया। भारत अरब और यूनान के संपर्क काफी प्राचीन है। इतिहास के जिस दौर में खिलजी वंश द्वारा नालंदा विश्वविद्यालय नष्ट किया जा रहा था, उस समय ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय की नींव पड़ रही थी। बौद्धिक नेतृत्व एशिया से युरोप की ओर जा रहा था। आज के विज्ञान की उपलब्धियों से चमत्कृत हुए लोग यह मान लेते हैं कि पश्चिमी देशों के लोग बौद्धिक रूप से श्रेष्ठ हैं। यदि दर्शन, गणित, विज्ञान के विकास पर नजर डाले तो यह मान्यता आधारहीन साबित होगी। पश्चिमी दुनिया अपनी संस्कृति की निरंतरता को प्राचीन यूनान की संस्कृति से जोड़ देती है। लेकिन ये आधा सच है। यूनान तो पश्चिमी संस्कृति के हाशिये पर रहा है।

यूनानी, भारतीय एवं इस्लामी सभ्यता ने जो विचार पैदा किये उनसे पश्चिम का संपर्क क्रूसेड (धर्मयुद्धों) में हुआ। यूनानी, भारतीय एवं इस्लामी साहित्य, दर्शन, ज्ञान-विज्ञान, न्यूमरल गणित आदि अरब से प्राप्त हुआ। जब स्पेन पर अरब का कब्जा था तब यूनानी (ग्रीस) साहित्य का अरेबिक में और अरेबिक से रोमन में अनुवाद हुआ था। भारतीय साहित्य तो पहले से ही अरेबिक में था वह भी अरेबिक से रोमन में अनुवाद हुआ था । दरअसल युरोप में 17वीं सदी से गणित और विज्ञान के विकास में तेज उफान दिखाई देने के पीछे भारत, चीन, मिश्र, अरब एवं यूनान इन पॉच देशों के पूर्व अर्जित ज्ञान का इकट्ठा व समन्वित होना है। पश्चिमी युरोप में रैनेंसां के बाद ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रीड्ज विश्वविद्यालय ज्ञान के नए केंद्र बने। प्रथम विश्व युद्ध के बाद मास्को भी ज्ञान के केंद्र के रूप में उभरना शुरू हुआ। दूसरे विश्व युद्ध के बाद युरोप कमजोर पड़ गया और अमेरिका ज्ञान का केंद्र बना। हार्वर्ड युनिवर्सिटी- हार्वर्ड बिजनेस स्कूल आज की दुनिया के ज्ञान के मुख्य केंद्र है।

४.१ प्रचलित ज्ञान केंद्रो की समीक्षा

ज्ञान से प्रेरणा का उदय होता है जिसे संकल्प कह सकते हैं। मनुष्य का आचरण ज्ञान से नियंत्रित-संतुलित होता है। मुख्य धारा में अभी जो ज्ञान के नाम से उपलब्ध है, उससे मनुष्य अपनी आवश्यकताओं-चाहनाओं को भी ठीक से नहीं पहचान पाया है। जब चाहना का ही पता नहीं तो फिर उसकी पूर्ति का सवाल ही नहीं बनता। इसी कारण मानव लक्ष्य(मकसद) स्पष्ट नहीं हो पा रहा है। ये ज्ञान के केंद्र ही आज की शिक्षा के आधार है। प्रचलित शिक्षा में एक भी ऐसा पाठ नहीं है जो हवस(ग्रीड) और आवश्यकता (नीड) में अंतर स्पष्ट कर सके। प्रचलित ज्ञान के केंद्रो मे प्रेरणा की तो समझ ही नहीं है। ज्ञान के नाम पर भ्रमित मान्यताएं ज्यादा है। जिससे आदमी मति भ्रम हो गया है। 21वीं सदी ज्ञान की सदी बताई जा रही है। इस सदी में ज्ञान का विस्फोट हो रहा है। न्यूयार्क, लन्दन, दिल्ली में या फिर कहाँ? ज्ञान किसके पास है? आम आदमी के जीने लायक ज्ञान भी खत्म हो रहा है। प्रचलित ज्ञान केंद्र मनुष्यों को प्रभावित, आकर्षित एवं नियंत्रित कर रहे हैं। यहाँ संतुलन वाला नियंत्रण नही, बल्की गुलामी वाला नियंत्रण है। आज के विनाश की भूमिका इन्ही ज्ञान केंद्रो मे बन रही है।

४.२ मध्यस्थ दर्शन के आधार पर ज्ञान केन्द्र

यदि सर्वशुभ, सार्थकता, अखण्ड समाज, मानवीय व्यवस्था के संदर्भ में कोई सार्थक पहल करनी है तो सचमुच के ज्ञान केंद्रो पर काम करना पड़ेगा। अभी हमारा प्रयास जिस तरह से चल रहा है उसका सम्मान है। इस प्रयास से सूचना तेजी से फैल रही है। जो लोग खड़े होंगे उनको तैयार करने का उपक्रम तो चलाना ही पड़ेगा। 1992-93 में जब हमें दर्शन स्वीकार हुआ

तभी से ज्ञान केंद्र की आवश्यकता नजर आने लगी थी। आदरणीय बाबाजी, भाई यशपाल सत्य जी, भाई साधन जी, भाई संजीव जैन जी के बीच विस्तृत चर्चाएं चली। विश्व विद्यापीठ का प्रारूप बना। 1994 से मार्च 1997 तक इस संदर्भ में पाठ्यक्रम बनाने का काम चला। 1997 मे भाई सत्यजी की मृत्यु होने के बाद हम कम पड़ गए। गोविन्दपुर में कुछ बाधाएं खड़ी हो गई तो वह काम रूक गया। मुझे लगता है आज हमारी इतनी सामर्थ्य है कि इस कार्य को कर सकते हैं। हर केंद्र/संस्थान/प्रतिस्ठान अपनी व्यवस्था को बनाए रखते हुए समग्र व्यवस्था मे भागीदारी का प्रयत्न कर सकता है। अभी समग्र व्यवस्था, एक व्यावहारिक अर्थ मे यह भी है कि हम मिल जुल कर कुछ ऐसा करें जो सार्थक-तृप्तिदायक हो। जिससे हम एक दूसरे के नजदीक आएं, पूरक बनें और हमारी मैत्री भी प्रमाणित हो।

कई साथियों से जब मैने इस पर चर्चा की तो वह पहले अपने केंद्र को खड़ा करने को महत्वपूर्ण मान रहें है। मुझे लगता है यह प्रयास अपने केंद्र को खड़ा करने में बाधक नहीं पूरक ही होगा। अपने केंद्र में रहकर ही सर्वशुभ हेतु अधिक काम करना है। और यदि सचमुच में बड़ा नहीं सोचेंगे तो हम अपने केंद्रो में अटक जाएंगें। अपने केंद्र कभी पूरे नहीं होते। सर्वशुभ अर्थात सार्वभौम मानवीय व्यवस्था से बड़ा कुछ होता नहीं। करना कितना है वह अपनी योग्यता-सामर्थ्य से तय हो जाएगा। राष्ट्रीय स्तर पर अभी हम एक पत्रिका भी नही चला पाए जबकि केंद्र तो बहुत बड़े-बड़े बनते जा रहें है। बस साल भर में एक बार मिल लेते हैं। मित्रो इस अवसर पर एक विनती है, **मेरे केंद्र/संस्थान** के साथ-साथ **हमारा केंद्र/संस्थान** भी जरूरी है। यदि **हमारे** पर काम नहीं करेंगे तो ये केंद्र भी **बाड़े** बन जाएंगें।

ये थोड़ा बड़ा काम है लेकिन इसके बिना तृप्ति भी कहाँ है। मुझे तो यह उत्सव का काम लगता है। होने वाला काम है। यदि धरती पर नई विश्व दृष्टि पैदा करनी है तो इससे कम में काम नहीं चलेगा। मेरा आग्रह है इस पर विचार शुरू हो। आपस में संवाद चले फिर मिलकर उसका स्वरूप तय हो। एक वर्ष तो इसी में लग जाएगा। अगले वर्ष उसको साकार करने की तैयारी शुरू की जाए कुल-मिलाकर अभी से सोचना शुरू कर देंगे तो धरातल पे आने में दो-तीन वर्ष लग जाएगा। मध्यस्थ दर्शन (सह-अस्तित्व वाद) जीवन विद्या की बैठक पर ही यह ज्ञान केंद्र खड़ा हो। आज के समय इसका स्वरूप, नाम, स्थान आदि सब तो बाद की बात है। पहले सभी को इसकी आवश्यकता लगे और इसको बनाने का संकल्प पैदा हो तब इन सबकी जरूरत है।

५. जीवन विद्या प्रतिष्ठान-गोविन्दपुर, खारी, बिजनौर(उ.प्र.) की स्थिति-गति

5 मार्च 1993 में जीवन विद्या प्रतिष्ठान का शुभारंभ पू. बाबाजी ने किया, यह पहला केंद्र बना। इन बातों की जाँच परख करने और उनके आधार पर जीने के क्रम में यह प्रयास शुरू हुआ। वहा¡ प्रारंभिक दौर में काफी सकारात्मक घटनाएं घटी। पू. बाबाजी का काफी समय इस केंद्र में लगा। भाई यशपाल सत्य जी ने इन बातों को समझकर बाबाजी के सानिध्य में आम आदमी की भाषा में रखना शुरू किया और उससे जीवन विद्या शिविरों का सिलसिला शुरू हुआ। विद्यालय में बच्चो के साथ, क्षेत्र में अभिभावकों के साथ, प्राकृतिक खेती, गौपालन, स्वास्थ्य आदि की दिशा में प्रयास चले। परिवार-मानव द्विमासिक (बाद में मासिक) पत्रिका का प्रकाशन शुरू हुआ। भाई यशपाल सत्य जी एवं भाई संजीव जैन के माध्यम से आई.आई.टी. दिल्ली के साथियों का गोविन्दपुर को कई ढंग से सहयोग मिला। आई.आई.टी. दिल्ली के छात्रो के नौ जीवन विद्या शिविर हुए। भाई संजीव जैन का सहयोग अविस्मरणीय रहा। अगस्त 1997 में भाई यशपाल सत्य जी की मृत्यू के बाद यह केंद्र ठहर सा गया। मेरी प्रवृत्ति पारिवारिक एवं सामाजिक रही। संस्थागत प्रयास मेरी प्रवृत्ति में नहीं रहा। स्वराज्य को ध्यान में रखकर दो चार गाँवों में जो प्रयास किये, उनकी सीमाएं नजर आने लगी। 2004 में मुझे ऐसा लगने लगा कि मानवीय व्यवस्था हेतु बड़े क्षेत्र में कार्य करने की आवश्यकता है। गोविन्दपुर के कार्यों को सीमित कर स्वराज्य के काम में अर्पित हुआ जाए। दो वर्ष के चिन्तन मनन परामर्श के बाद 25 फरवरी, 2007 गंगा-यमुना पश्चिमी दोआब में सर्व शुभ अभियान एवं मैत्री संवाद यात्रा का कार्यक्रम निकला। फरवरी 2009 में दो वर्ष के संकल्प का बिजनौर में पदयात्रा के रूप में समापन हुआ। इसके बाद यात्रा का क्रम लगातार की जगह, आवश्यकता अनुसार चला।

यात्रा के दौरान हजारों ऊर्जावान लोग संपर्क में आए। जीवन विद्या शिविर, प्राकृतिक खेती एवं स्वास्थ्य शिविर भी साथ-साथ चलते रहे। इस वर्ष अप्रैल से जीवन विद्या प्रतिष्ठान, गोविन्दपुर, बिजनौर को पुनः सक्रिय करने का काम शुरू कर दिया है। यहा¡ नौ एकड़ (45बीघे) समतल-सिंचित कृषि भूमि है। शिशु से कक्षा 10 तक एक प्रतिष्ठित विद्यालय है। जिसमें लगभग 600 विद्यार्थी हैं। 10,000 वर्ग फिट का एक नया भवन है जो स्वास्थ्य व शिक्षा के प्रयोग हेतु बना है।

६. स्वास्थ्य एवं समग्र चिकित्सा केंद्र की आवश्यकता

जीवन विद्या प्रतिष्ठान में एक स्वास्थ्य एवं समग्र चिकित्सा केंद्र की आवश्यकता लम्बे समय से महसूस की जा रही है। अभी स्वास्थ्य के नाम पर चिकित्सा की जा रही है। तन का स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य एवं भावनात्मक स्वास्थ्य तीनो आयाम पर काम हो। स्वास्थ्य के संदर्भ में जो काम अब तक हुआ है उसको पहचान कर स्वीकार करें, जहाँ कम पड़ते है वहाँ शोध कार्य हो यदि वास्तव में स्वास्थ्य पर ठीक से काम हुआ तो 90% रोग तो होंगे ही नहीं। 5% रोगों को प्रकृति, ऋतु, शोधक आहार एवं आरोग्य कारी विहार से ठीक किया जा सकता है। शेष 5% रोगों में ही वैद्यकीय (डॉक्टरी) चिकित्सा की आवश्यकता पड़ेगी। किस रोग में किस पद्धति को अपनाया जाए यह भी महत्वपूर्ण कार्य है। जटिल, असाध्य रोगों की चिकित्सा में किन दो-तीन चिकित्सा पद्धतियों का किस मात्रा में सहयोग लिया जाए, इसको ध्यान में रखकर समग्र चिकित्सा पर कार्य हो। आज स्वास्थ्य की स्थिती बहुत खराब है, और असाध्य रोगों की गिनती बढ़ रही है। मानसिक रोग, तन के रोगों को ओवर टेक कर रहें है। मायने मानसिक रोग (संशय, जुनून, अवसाद) शरीर के रोगों से आगे निकल रहें हैं। स्नायुतंत्र (नर्वस सिस्टम) की कमजोरी, रोग प्रतिरोधक क्षमता(इम्यून सिस्टम) की कमी, अंतःस्त्रावी ग्रंथियों(हार्मोनल सिस्टम) का असंतुलन नए घातक रोगों को जन्म दे रहा है। कैन्सर, हृदय रोगों के अलावा लीवर, गुर्दे के रोग भी घातक हो गए हैं। पुराने रोग तो है ही। सब संदर्भो को ध्यान में रखकर स्वास्थ्य एवं समग्र चिकित्सा केंद्र की बड़ी भूमिका है। इस हेतु कई योग, स्वास्थ्य एवं समग्र चिकित्सा के जानकार लोग भी हमारे संपर्क में है।

सहयोग की अपेक्षा में सादर निवेदन

विद्या से जुड़े देश भर के मित्रों को उनकी सुविधा अनुसार इस प्रयास में जोड़ने की कोशिश है। हमारे प्रयास के केंद्र में मानवीय व्यवस्था है। गाँव के आम आदमी को ध्यान में रखकर लेखन कार्य भी शुरू किया है। जीवन विद्या प्रतिष्ठान गोविन्दपुर को पुनः सम्भालने तथा स्वास्थ्य एवं समग्र चिकित्सा केंद्र की शुरूआत के पीछे भी मानवीय व्यवस्था ही प्रेरक कारक है।

- **स्वराज्य क्षेत्र का चयन एवं घोषणा**

मानवीय व्यवस्था हेतु यदि कोई और क्षेत्र सभी मित्रो को उचित लगता है तो उसको स्वीकार किया जाए। हमसे जितना भी बनेगा, उसमें सहयोगी बनेंगे। यदि कोई दूसरा क्षेत्र अभी सामने नही है, तो क्या आप सभी महाअनुभाव गंगा-यमुना पश्चिमी दो आब को परिवार मूलक स्वराज व्यवस्था के रूप में स्वीकार कर सकते है। यदि हाँ तो सम्मेलन के एक डेढ़ घण्टे के सत्र में उसकी रूपरेखा बनाई जाए। एक वर्ष के भीतर जरूरी तैयारी करके अगले वर्ष पश्चिमी दो आब का सम्मेलन कर के उसकी घोषणा की जाए। और इस कार्य में अन्य साथी सहयोगियों को भी जोड़ा जाए।

- **स्वास्थ्य एवं समग्र चिकित्सा केंद्र**

स्वास्थ्य एवं समग्र चिकित्सा केंद के नामांकन से लेकर उसको संचालित करने में आप खुशहाली पूर्वक तन, मन, धन के रूप में अपनी भागीदारी अर्पित करें। इच्छा है यहा¡ का भौतिक विकास भी प्राकृतिक सौंदर्य के साथ-साथ प्रेरणादायी भी हो। यहा¡ कम से कम लोहा-सीमेंट का इस्तेमाल हो। अधिकतम आवर्तनशील प्राकृतिक संसाधन मिट्टी, पत्थर, बा¡स, लकड़ी आदि का प्रयोग हो। Aर्जा के वैकल्पिक साधनो पर काम हो।

कृतज्ञता

मेरी जीवन यात्रा में हजारों लोगों का विभिन्न रूपों में सहयोग मिला है। विचार, समझ, ज्ञान एवं लक्ष्य के रूप में भी सैकड़ो लोगों की भूमिका रही है, लेकिन दिशा पू.बाबाजी के सानिध्य में तय हुई। श्रद्धेय सत्य जी ने मेरे विचारों को फैलाव दिया और विद्या को समझने में सहायक हुए। मानवीय परंपरा व पू.बाबाजी, भाई यशपाल सत्य जी एवं अन्य पथ प्रदर्शकों, अभिभावकों, समस्त सहयोगी मित्रों के प्रति कृतज्ञता अनुभव करते हुए उत्सवित हो रहा ह¡। इस लेख में जिन कमियों की तरफ

मैने इशारा किया है, उन्हे कोई मित्र व्यक्तिगत न माने, यह हम सबकी साझा कमी है। आपने मुझे समय दिया और सुना इसके प्रति आप सबका कृतज्ञ हूं। सभी मित्र इन बिन्दुओं पर विचार करेंगें, ऐसी अपेक्षा के साथ सभी को यथायोग्य अभिवादन।

धन्यवाद

आपका अपना
रणसिंह आर्य

जीवन विद्या प्रतिष्ठान गोविन्दपुर, खारी- बिजनौर (उ.प्र.) मो.- 09412218178

मानवीय व्यवस्था-ग्रामीण समाज के आम आदमी को ध्यान में रखकर निम्न पुस्तकों एवं निबंधों (छोटी पुस्तिका) के लेखन का काफी काम हो चुका है, आप इसमें सहयोगी बनें ऐसी अपेक्षा है। प्रस्तावित पुस्तकें-

प्रस्तावित पुस्तकें

१. निरन्तर विश्वास, सम्मान, मैत्री एवम तृप्ति पूर्वक जीने
का
एक प्रस्ताव.

समाधान

एक सुःखद, सुन्दर, समृद्ध बेहतरीन दुनिया का आधार

२. दुनिया में विनाशकारी संकट की घड़ी
में
हम अपनी जिम्मेदारी स्वीकारें
समाज आपात्काल घोषित करें – अपनी दृष्टि और कार्यों की जांच करें
और
सभ्यताओं की समीक्षा करते हुए मिलजुलकर समाधान खोजें
(भारत में इतनी सामर्थ्य अभी है कि वह सम्भल सकता है और दुनिया को सम्भालने में सहायक हो सकता है)

३. मानवीय व्यवस्था
सर्वतोमुखी समाधान : अखंड समाज – सार्वभौम व्यवस्था
के लिए
प्रस्तावित
योजना, कार्यक्रम एवं क्रियान्वयन
विनय पूर्ण आग्रह
एवं
सहयोग की अपेक्षा में सादर आमन्त्रण

४. अमीरी, गरीबी, बेरोज़गारी व अभाव
से
समृद्धि की ओर यात्रा
सम्मान एवं प्रकृति पूरक आजीविका

निबंध

१. जाति और वर्ग का मुद्दा
२. किसान भाइयों से विनती एवं आग्रह
३. चिकित्सक मित्रों से विनती एवं आग्रह
४. हम लोग
५. अधिकार-अधिकारी
६. सर्वशुभ मानवीय व्यवस्था के प्रेरक श्रद्धेय ए.नागराज जी-जीवन परिचय

15 वाँ
राष्ट्रीय सम्मेलन

13 - 15 NOV

बाँदा